शोध मंथन Vol. XIV No.I Jan.-Mar.2023 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Impact Factor 8.870 (SJIF)

प्राचीन भारतीय कला में शिल्पकार एक विवरणात्मक अध्ययन

डॉ० बजरंग प्रताप मिश्र
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, प्राचीन इतिहास विभाग
शिवपत्ति पी०जी० कालेज, शोहरतगढ़, सिद्धार्थनगर
ईमेलः *bajaranjpratap@gmail.com*

प्राप्तिः 12.01.2023
स्वीकृतः 15.03.2023

1

सारांश

भारतीय कला का स्वरूप जितना प्रसंशनीय है उतना ही प्राचीन भी। विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों एवं अन्य प्रेरक तत्वों से निःसृत भारतीय कला में एकरूपता के कारण थे प्राचीन कलाकार–शिल्पकार। प्राचीन कलाकार कला के क्षेत्र में सांप्रदायिक नहीं थे, बल्कि वे पूर्ण रूप से कलाकर थे। मूर्ति निर्माण अथवा स्थापत्य कला से संबंधित अनेक कलाकारों के अनेकानेक संदर्भ अभिलेखों में मिलते हैं। 'सूत्रधार', 'स्थापित', या रूपकार आदि नामों से अभिहित यह वर्ग शब्द वर्ग में परिगणित था।

विश्वकर्मा धातु कर्मार के रूप में धातु से विभिन्न वस्तुओं के निर्माण में संलग्न थे। प्राचीन अभिलेखों में शिल्पियों को रूपकार, रूपदक्ष आदि कहा गया है। विज्ञानिन, अभिधान का प्रयोग मुख्यतः उड़ीसा तथा आंध्र के अभिलेखों में शिल्पियों के लिए प्रयुक्त है। सांब पुराण में विश्वकर्मा को शिव की मानुषी मूर्ति का प्रणेता कहा गया है। भारतीय कला एवं स्थापत्य के पूर्ण विवेचन में शिल्पकारों के योगदान को रेखांकित करना लक्षित है जिसके द्वारा शैलियों के क्षेत्रीय एवं व्यापक परिमाणों का अध्ययन संभव हो सकता है।

मुख्य बिन्दु

रूपकार, विज्ञानिन, राष्ट्र, संघमन, दासोजा, विश्वकर्मनुशासन, शुक्राचार्यानुशासन, सेलवट्टकि सोवरिश।

प्राचीन भारतीय कला के क्रमिक विकास में शिल्पकारों–कलाविदों का अद्भुत योगदान रहा है। इन्होंने लगन व प्रेरणा से सुंदरतम मूर्तियों की रचना की। कलाकारों–शिल्पकारों के उल्लेख प्राचीन भारतीय अभिलेखों में सूत्रधार, रूपकार आदि नामों से हुए हैं। उल्लेखनीय है कि यह वर्ग शूद्र के अन्तर्गत परिगणित था किन्तु अपनी कार्यकुशलता और धार्मिक–सामाजिक उपादेयता के कारण अपने वर्ग में इनकी स्थिति उच्च थी।[1]

विश्वकर्मा जो कालांतर में स्थपतियों के कुलदेवता के रूप में प्रतिष्ठित हुए, का उल्लेख वैदिक साहित्य में धातु–कर्मार के रूप में हुआ है। विश्वकर्मा इस रूप में धातु से विभिन्न वस्तुओं के निर्माण में संलग्न थे। उल्लेखनीय है कि धातु–कर्मार के रूप में बहुविध वस्तुओं के निर्माण प्रक्रिया को संघमन कहा गया है।[2]

प्राचीन भारतीय अभिलेखों में इन कलाकारों–शिल्पकारों को रूपकार अथवा रूपदक्ष कहा गया है। भरहुत से प्राप्त एक अभिलेख में बुद्ध रचित नामक रूपकार का उल्लेख मिलता है। जोगीमढ़ा गुफाओं के एक अभिलेख मिलता है। जोगीमगढ़ा गुफाओं के एक अभिलेख में वाराणसी निवासी तरुणाों में श्रेष्ठ देवदत्त नामक रूपदक्ष की सुतनका नामक देवदासी के प्रति प्रेम का उल्लेख है।[3] इसके अतिरिक्त सांची के अभिलेखों में अर्थ, अभय और प्रियदर्शिक[4] का उल्लेख है जो रूपकार थे। एक सातवाहन अभिलेख में आए हुए आवेशनिन शब्द की व्याख्या शिल्पीशीला[5] के अर्थ में की गयी है। हेमचन्द्र ने भी अभिधान–चितामणी में आवेशनिन के शिल्पीशाला अर्थ को स्वीकार है। संभवत् यह शिल्पशालाएं राज्याश्रित थीं जहाँ कलाकारों को प्रयोग एवं प्रशिक्षण की सुविधाएं मिलती होगी।

कन्हेरी के चैत्य गुफा सं0–3 में एक अभिलेख है जिसमें दो भाईयों गजसेन व गजमित्र द्वारा निर्मित एक चैत्य का विवरण है। इस लेख में कुछ ऐसे शब्द अंकित हैं, जो ब्यूलर के मत में कार्मिको के हैं। अभिलेख में भदंत शैवल के निरीक्षण में कार्यरत सेलबड्डकी तथा पत्थर को चमकाने वाले एवं अन्य प्रकार से दक्ष कार्मिक का उल्लेख है। इसमें नायक मिसेहि सलेवाट्ठकी, क्रडिचकेहि आदि नाम कार्मिकों के विभिन्न वर्गों की ओर संकेत करते हैं। उल्लेखनीय है कि निर्माण कार्य करने वाले कार्मिकों की सूचना तथा कार्य विभाजन सम्बन्धी सामग्री महावंक्ष में भी मिलती है। इसमें कम्मधिट्टायक का उल्लेख है, जो सम्पूर्ण कार्य के निरीक्षण के लिए नियुक्त होते थे, महावंश के अध्याय 29–31 में महाथूप व लोहु प्रसाद के साथ का उल्लेख है। महावंस का एक रोचक उल्लेख है कि महास्तूप के निर्माण के लिए पांच सौ विभिन्न कार्मिक एकत्र हुए। उसमें से एक मनस्वी कार्मिक का चयन राजा ने अपने प्रश्नों के संतोषजनक उत्तर पाने के बाद किया।[6]

परखम के यक्षमूर्ति के निर्माता, कुणिक के शिष्य, गोगित्र एवं झींग की नगला की यक्षी मूर्ति के निर्माता उक्त कुणिक के अन्य शिष्य तक उल्लेखनीय हैं।[7] परवर्ती चालुक्यों के एक रूपकार इतना कार्यकुशल था कि उसने वर्णमाला के में गज, सिंह, वृषभ, आदि आकृतियों को आबद्ध करने की घोषणा की है।[8] परवर्ती, दक्षिणी कर्णाट् शैली केमदिरो में भी अनेके रूपकारों के नाम व उनकी प्रशास्तियों मिलती हैं। उल्लेखनीय है कि दासोजा नामक एक ख्यातिप्राप्त कलाकारों के समूह का उच्चदेक तथा उसके पुत्र छावण को भी ख्यातिनामा मदनरूपी कलाकारों का शिव कहा गया है।[9]

एक अभिलेख में कोकास वंश के फलदीपक छीतक नामक सूत्रधार का वर्णन मिलता है जिससे ज्ञात होता है कि यह सूत्रधार शिल्पशास्त्र का ज्ञाता था। यह काष्ठ पाषाण, सुवर्ण आदि माध्यमों में मूर्ति निर्माण में सिद्ध था। इसके साथ–साथ वह जंत्र विद्या व महाविद्याओं का ज्ञाता भी था। वह वंक, त्रिवंक का वादक था साथ ही, लतापत्र आदि के अंकन में कुशल भी।[10]

चंदेल शासको के शिल्पियों में श्री सातन तथा उसका पुत्र छितकन के नाम प्राप्त होते हैं। उल्लेखनीय है कि छितनक ने महोबा से प्राप्त विसत्य सिंहनाद की मूर्ति का निर्माण किया था। श्रीसातन की वधू भी चित्रांकन में निपुण थी, उसकी कृति तारा की मूर्ति पर इसका उल्लेख है। छीतक वछितनक के संदर्भ में विभिन्न विधाओं के ज्ञान से संबंधित उनके उल्लेख महत्व के हैं। मूर्तियों के निर्माण में मुद्राओं के अंग–प्रत्यंग के आरोह–अवरोह ताल–मान और आभंग के ज्ञान की आवश्यकता थी।[11]

शिल्पियों के लिए विज्ञानिन पदवी मुख्यतः उड़ीसा तथा आंध्र के अभिलेखों में मिलती है। उड़ीसा के बौध राज्य, तथा बिहार के राणक वंशीय राजाओं के अभिलेखों में भी विज्ञानिनों के उल्लेख हैं। चंदेल, परमार तथा कलचुरि लेखों में विज्ञानिनों के उल्लेख इस क्षेत्र में पूर्वी क्षेत्र के प्रभाव की ओर संकेत करते हैं।[12]

संभवतः विज्ञानिनों के साथ उनकी कला नैपुण्यता श्री उड़ीसा से इस क्षेत्र में आयी होगी। खजुराहो और दक्षिण कोसल की कला शैली में तथा सापत्य में ऐसे समान लक्षण स्पष्ट रूप से मिलते हैं।[13]

प्राचीन शिल्पशास्त्रों में विविध शिल्प–आचार्यों के उल्लेख हैं। मत्स्य पुराण[14] में भृगु, अति, वशिष्ठ, मय, नारद, नग्नजित, विशालक्ष, शिव शौनक आदि अट्ठारह वस्तु–आचार्यों का उल्लेख है। शिल्प की शास्त्रीय परम्परा में दो आदि देवों–विश्वकर्मा व शुक्राचार्य का महत्व स्वीकार किया गया है। विश्वकर्मा व शुक्राचार्य क्रमशः देव व आसुरी प्रवृत्ति के प्रतीक–पुरूष हैं। उल्लेखनीय है कि देव कला के प्रमुख लक्षण सौम्य एवं सुसंस्कृत रूप योजना तथा आसुरी कला के प्रमुख लक्षण असौम्य व विकृत रूप योजना है। एलिस बोनर के विचार में विश्वकर्मानुशासन और शुक्राचार्यनुशासन संभवतः कला के दो प्रमुख धाराओं के प्रतीकात्मक अभिज्ञान है जो क्रमशः देवी एवं आसुरी शक्तियों की निर्देशक है।[15] वेदों, महाभारत एवं पुराणों में विख्यात शिल्पी त्वष्ट्र के ही प्रतिरूप माने गए हैं विश्वकर्मा त्वष्ट्र को विश्वकर्मा का पिता भी कहा गया है फिर भी विश्वकर्मा से सबंधित परम्परा अधिक व्यापक हैं। वे ऋग्वेद धातृ–विधात् उन्होंने पृथ्वी को उत्पन्न किया एवं आकाश को अनवावृत किया।[17] चंदेल तथा कलचुरि अभिलेखों में, विश्वकर्मा विधानवेत्ता अथवा विश्वकर्मा व्याधियों से विभूषित कलाविदों के उल्लेख मिलते हैं।[18] सांब पुराण में विश्वकर्मा के संदर्भ में जानकारी मिलती है जिसे अनुसार विश्वकर्मा सूर्य के भौतिक रूप के निर्माता थे। विष्णुधर्मोत्तर पुराण में विश्वकर्मा को नारायण के माध्यम से चित्रकला के प्रथम ज्ञाता के रूप में स्वीकार किया गया है।[19] सांब–पुराण में विश्वकर्मा को शिव की मानुषी मूर्ति का प्रणेता कहा गया है।[20]

विश्वकर्मा की प्रतिष्ठा अभिलेखों में वर्णित रूपकार–सूत्रधार आदि के आदि पुरूष के रूप में है।

उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट है कि कलाकारों की विभिन्न श्रेणियां तथा वर्ग स्थापत्य एवं मूर्तिकला के विकास में संलग्न थीं। कला एवं स्थापत्य के विकास में इनके योगदान को उपरोक्त संदर्भों के आधार पर रेखांकित किया जा सकता है।

संदर्भ

1. मिश्र, रमानाथ. भारतीय मूर्तिकला का इतिहास. पृष्ठ **301.**
2. अग्रवाल, वी.एस. ऋग्वेद 10–72.2. इण्डियन आर्ट. पृष्ठ **40.**
3. ल्यूडर्स लिस्ट : एपिग्राफिया इण्डिका. 10. अभिलेख सं0 92. पृष्ठ **93.**
4. मार्शल : मानूर्मेटस आफ सांची. 1. अभिलेख सं0 199,444,454.
5. वाङ्मय. ज्ञानमण्डल वाराणसी. आवेशन. 399.
6. मिश्र, रामनाथ. भारतीय मूर्तिकला का इतिहास. पृष्ठ **303.**

7. vxzøky] chŒ,l ŒEHkkjrh, dyk- i'B 1.
8. मिश्र, रामनाथ. भारतीय मूर्तिकला का इतिहास. पृष्ठ 304.
9. शिवराममूर्ति, सी०. इंडियन स्कल्पचर. पृष्ठ 1.
10. मिश्र, रामनाथ. भारतीय मूर्तिकला का इतिहास. पृष्ठ 304.
11. वही. पृष्ठ 305.
12. वही. पृष्ठ 308.
13. वही. पृष्ठ 309.
14. मत्स्यपुराण. 255.4. विश्वकर्मा प्रकाश. 19–110.
15. एलिस, बोनर. शिल्पप्रकाश. पृष्ठ 134.
16. ब्रह्मांण्ड पुराण. 3–1–86. भागवत. 6–9–45–54.
17. ऋग्वेद. 21, 10–82–3.
18. मिश्र, रामनाथ. भारतीय मूर्तिकला का इतिहास. पृष्ठ 309.
19. हाजरा, आर०सी० स्टडीज इन उपपुराणाज. पृष्ठ 42 से आगे।
20. वही. पृष्ठ 32, 40.